हर्षिता शुक्ला 'ज़हन' की कविताएँ

माफ करना मैं तुम्हें और सताना नहीं चाहती

माफ करना मैं तुम्हें और सताना नहीं चाहती,
इश्क तो बेपनाह है तुमसे पर बताना नहीं चाहती,
वफाओं की गठरी तो बहुत भारी है मेरी,
मगर बेगुनाही के सबूत तुम्हें दिखाना नहीं चाहती,
माफ करना मैं तुम्हें और सताना नहीं चाहती,
आज अकेली हूं मैं मगर इक दिन तुम साथ थे,
इतने कच्ची भी न थे रिश्ते जब हाथों में हाथ थे,
किस्सा क्या हुआ ज़हन तो भूल चुका है सब,
तुम्हारी आबाद यादों को मैं भुलाना नहीं चाहती,
माफ करना मैं तुम्हें और सताना नहीं चाहती,
इश्क का इजहार तो मतलब हुआ हमदम,
यह प्यार तो बस प्यार है तुम यार हो हमदम,
कुछ देने के बदले कुछ हर्जाना नहीं चाहती,
खुद्दारी में तुझ से तुझको बांटना नहीं चाहती,
माफ करना मैं तुम्हें और सताना नहीं चाहती,
तेरे जाने से कोना-कोना बिलख रहा देखो,
जो मौसम रंगीन था वह बेरंग रो रहा देखो,
मैं तो मान चुकी पर दिल को मनाना नहीं चाहती,
अब बहुत हुआ मैं तुम्हें और सताना नहीं चाहती,
तुम आसमान के पंछी ठहरे हम तो नादान फकीर सही,
हम थे सुलझे हुए ज़हन पर उलझे चलो एक हीर सही,
अब तो बिखर चुकी टुकड़ों में खुद को संभालना नहीं चाहती,
माफ करना मैं तुम्हें और सताना नहीं चाहती।

एक अरसा गुजर गया

एक अरसा गुजर गया तेरी यादों के ढेर में,
बेदर्द मौन और घुटन से भरी रातों
के पहर में,
तकलीफ को सीने से लगाए,गम की चादर ओढ़कर,
जिस वक्त गया तू, तेरे दीदार बगैर मैं,
तू चाहता था मुझे,ये बात सच्ची थी,
पर मैं पगली अनजान,अक्ल की कितनी कच्ची थी,
पर इक बार तो इश्क का इजहार होना था,
बात बहुत बड़ी नही बस नियति के फेर में,
इक अरसा गुजर गया तेरी यादों के ढेर में,
ये मिलन की गाथा नही, रूह का जुड़ाव था,
पाक था बेहद,ये मन का मिलाप था,
आज फिर ये मुलाकात,क्या रंग लाई है,
तुझे देख न जाने क्यूं ये आंखें नम हो आई हैं,
मैं अब भी वही ठहरी हूं, जहां छोड़ गया था तू,
लौट कर आया भी अब तो बड़ी देर में,
इक अरसा गुजर गया तेरी यादों के ढेर में।

कह रही है

दरो दीवार कह रही है,
हर वो शाम कह रही है,
आंखों की भाषा से,
वो पैगाम कह रही है,
चाहत जिसको कुछ नहीं,
वो एहसास कह रही है,
गमों की बस्ती का वो,
इतिहास कह रही है,
दुश्मन है उम्मीद जिसकी,
वो विश्वास कह रही है,
बड़े सब्र से साह,
ये शुरुआत कह रही है,
सपने में उसने भी,
कई ख्वाब सजोए हैं,
दर्द की दहलीज पर,
नए एहसास बटोरे हैं,
जो भूल गई हर ज़िद अपनी,
अब वो जज्बात कह रही है,
लड़की जो बेजार थी,
वो आकाश कह रही है,

आंखों की भाषा से पैगाम कह रही है।

बाकी है

कई सवालों के अभी जवाब बाकी हैं,
तेरे किए गुनाहों के हमपे इल्जाम बाकी हैं,
जिसे माना अपनी जान से बढ़कर हमने,
उस बेवफा के पांवों के निशान बाकी हैं,
खूबसूरत पलों की इक गठरी,
अब भी आबाद है इस ज़हन में,
अपनी आंखों में सजाए उन सपनों का जहान बाकी है,

जिसे चाहा जिसे पूजा,
न जाने कब वो दूर हो गया,
पूरे तो बहुत हुए सपने,
पर वो इक अरमान बाकी है,
भरोसा करके उन पर दिल अब खुद से नाराज़ है,
बात जो भी हुई पर ये मन क्यूं हताश है,
अब ये विश्वास तो बहुत दूर की बात है,
मुझपे लगे इल्जामों का उन पर अभी एहसान बाकी है,
कई सवालों के अभी जवाब बाकी हैं।

अपना आंगन

अपना आंगन अपना घर किसे लुभाता नही बसर,
छोड़कर आना इसे होता बहुत ही कठिन सफर,
हर बात में आती याद हमें अपने घर की यादें,
कभी कभी तो आंसू से भर जाता आंखों का घर,
इन आंखों में सिर्फ संवरता अपने आंगन का वो चेहरा,
जिस आंगन में पली बढ़ी मैं,
जिस आंगन को मैंने छोड़ा।

हर्षिता शुक्ल
छात्रा, प्रथम वर्ष बी.एससी., सेंट जोसेफ विश्वविद्यालय, बेंगलुरु-560027
Email: harshitasoul@outlook.com